आदिवासी विमर्श

हिन्दी साहित्य में आदिवासी चेतना के स्वर

भारत में 450 से अधिक आदिवासी समुदाय हैं – जैसे भील, सीदी, संथाल, गोंड, खासी गारो येडा काडर, कबुतरा, ठाकर, कातकरी आदि जो देश के विभिन्न राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों में निवास करते हैं। भारतीय संविधान में इन समुदायों के लिए 'अनुसूचित आदि जाति' शब्द का प्रयोग किया गया है। भारत के अधिकतर आदिवासी वन्य एवं पहाडी प्रदेशों के ग्राम्य विस्तार में निवास करते है। आदिवासी समाज के इतिहास में हम जाए तो हमारे देश में भारतीय समाज में सालों से एक विचित्र परिस्थिति देखने को मिलती है। हमारा हिंदू धर्म एक तरफ तो प्राणीमात्र पर दया, स्नेह, सहानुभूति रखता है तो दूसरी तरफ हरिजन, आदिवासी, दलित आदि जिंदा मानव को प्राणी से भी तुच्छ समझता है। मानव-मानव के बीच उँच-नीच अस्पृश्यता की दीवार उसने खड़ी कर दी। इस अन्याय पूर्ण व्यवस्था के कारण आदिवासी, अनुसूचित जातियों को हजारों वर्षों से अमानवीय जीवन व्यतीत करना पड़ रहा है।

आदिवासी शब्द का नामकरण

भारत के आदिवासियों का संवैधानिक नाम 'अनुसूचित आदि जाति' है। जिनको भिन्न-भिन्न नामों से जाना जाता है। जैसे वनवासी, गिरिजन, आदिम जाति आदि।

परिभाषाएँ :--

मुकर्जी :-- "प्रदेश भाषा, सामाजिक नियम एवं आर्थिक प्रवृत्तियों में एकरुपता प्राप्त प्रादेशिक जूथ आदिवासी है।"

डॉ. डी डी मजूमदार :-- "प्रादेशिकता से जुड़े हुए अंतर्विवाहित सामाजिक समुदाय आदिवासी है। जिसमें कार्यों की सामान्यीकरणता का अभाव, स्वयं विकसित शासन प्रणाली, भाषा में एकरूपता एवं अन्य आदिवासी से सामाजिक अंतर रखनेवाले आदिम परंपराओं, रीति-रिवाजों, कर्मकांडो का अनुसरण करनेवाले होते हैं।"

आंतर्राष्ट्रीय श्रम संघटन (आई.एल.ओ) :-- "किसी देश-प्रदेश के वे लोग जो आदिकाल से वहाँ निवास कर रहे है, उन्हें उस देश-प्रदेश का आदिवासी कहा जाता है। आदिवासी उस देश-प्रदेश के मूल निवासी होते हैं।"

मानक हिंदी कोश :-- " किसी देश या प्रांत के वे निवासी जो बहुत पहले से वहां रहते आए हों और जिनके बाद और लोग भी वहां आकर बसे हों। आदिम निवासी !"

आदर्श हिन्दी कोश :-- "जो जनसमुदाय आदिकाल से ही अपने मूल स्थान पर पूर्वजों द्वारा बनाए गए रीति रिवाजों का पालन करते हुए जीवन-यापन करते है, वे आदिवासी होते है।"

सुधीर वर्मा :-- "मनुष्यों की जो जातियाँ आदिम युग से अपने मूल प्रदेश अथवा क्षेत्र में अपनी मौलिक स्थिति एवं परिस्थियों के साथ निवास कर रही है। उन्हें आदिवासी जातियाँ अथवा जनजातियाँ कहा जाता है।"

बोअस :-- "जनजाति का अर्थ आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र ऐसा जन-समूह जो एक भाषा बोलता है तथा बाह्य आक्रमण से सुरक्षा के लिए संघटित होता है।"

जे एन गिलीन और जे पी गिलीन :-- " जनजाति किसी भी ऐसे स्थानीय समुदायों के समूह को कहा जाता है जो एक सामान्य भू-भाग पर निवास करता हो एक सामान्य भाषा बोलता हो और सामान्य संस्कृति का व्यावहारिक करता हो।"

By Dr. Sangita Chitrakoti

जैकब्स और स्टर्न :-- " एक ऐसा ग्रामीण समुदाय या ग्रामीण समुदाय का समूह है, जिसकी सामान्य भूमि हो, सामान्य भाषा हो, सामान्य संस्कृतिक परंपरा हो और जिस समुदाय का जीवन आर्थिक दृष्टि से एक दूसरे के साथ ओतप्रोत हो, वह जनजाति कहलाती हो।"

आदिवासी लोकजीवन की विशेषताएँ

* सामाजिक रीति-रिवाज एवं प्रथाएँ :--

जनजातियों के अपने रीति-रिवाज है, प्रथाएँ है एवं नियम, कानून हैं, जिन्हें वे अपने ढंग से व्यवहार में लाते हैं। इनमें परंपरागत सामाजिक प्रथाओं, रीतियों और नियम, कानूनों की जानकारी एक पीढ़ी को हस्तांतरित करने के लिए सामुदायिक केंद्रों की स्थापना की परंपरा है। इन्हें कहीं घोटुल और कहीं रंग-बंग कहा जाता है।

* उत्सव :--

जनजातीय समुदायों के अपने अपने उत्सव एवं तीज-त्योहार होते हैं, जिन्हें वे अपनी - रीति-रिवाज के अनुसार मानते हैं। जीवन की कठोरता के मध्य भी आदिवासी मस्ती एवं उमंग भरा जीवन जीते है।

* सामुहिक खेती :-- कुछ-कुछ जनजातियों में सामूहिक खेती करने की परंपरा विद्यमान हैं, जो उनकी एकता एवं संगठन शक्ति का भी प्रतीक है। सहकारिता की यह भावना लोकजीवन संस्कृति के उज्ज्वल पक्ष का उद्घाटन करती है।

* अंधविश्वास :-- अशिक्षा के कारण जनजातीय समुदायों में अत्यधिक अंधविश्वास फैला हुआ है। मिथ्या अंधविश्वासों के कारण कभी-कभी इन्हें अपने प्राणों से भी हाथ धोने पड़ते है। बीमार पड़ने पर अस्पताल जाने के बदले ओझा के पास जाते है। भूत-प्रेत, पिशाच्य आदि के अस्तित्व को स्वीकार करते है और इनसे डरते भी है। जादू- टोना, जंतर-मंतर आदि में पूरा विश्वास होता है। जनजातीय में यह विश्वास पाया जाता है कि जो काम देवता नहीं कर सकते वह भूत-प्रेत कर सकते हैं।

* प्रकृति के प्रति भय एवं पूजा :-- आदिवासी लोक-जीवन अधिकतर जंगलो एवं है पर्वतों में ही बीतता है। जंगली जानवरों का शिकार जंगल के फल-फूल आदि से उनका पेट भरता है इसलिए नये वर्ष घास-बांस आदि काटने से पहले वे जंगल देवता की पूजा करते है ताकि प्रकृति उनसे कुपित न हो जाए।

*आशिक्षा :-- आदिवासी अपना पेट ही ठीक तरह से नहीं भर सकते तो अपने बच्चे को पाठशाला कैसे भेज सकते है ? आदिवासियों को स्थलांतर करना पड़ता है तो वे अपने साथ अपने बच्चे को भी ले जाते है। अर्थात् उनकी पढ़ाई छूट जाती है। दूसरी बात यह है कि शिक्षा के लिए आवश्यक खर्चा भी माता-पिता उठा नहीं सकते इसलिए उन्हें स्कूल नहीं भेजते । बच्चा स्कूल जाने से यदि दो पैसे कमाता है तो अच्छा है इसलिए माता-पिता बच्चों को भी काम पर ले जाते है।

आज आदिवासी समाज की दशा और दिशा पर चिंतन शुरू हुआ है। आदिवासी अपनी स्थिति पर चिंतन शुरू हुआ है। अपनी चिर वेदना को वाचा दे रहे है। दुसरों द्वारा अपने दुःख की चर्चा सुनने के बजाय अपना दुख खुद व्यक्त करने की चेतना। अब आदिवासी समाज जगने लगा है। अंग्रेजों के जमाने से ही आदिवासी अस्मिता का आंदोलन शुरू हो चुका था। डॉ. बाबासाहेब आबेंडकर गाँधीजी तथा कई दलित आदिवासी नेताओं ने इस समस्या पर देश का ध्यान खींचा और आजादी के बाद जब संविधान बना तो इनके संरक्षण और आरक्षण का प्रावधान किया गया।

युगों से चले आ रहे मौन को उन्होंने तोड़ा। आदिवासी समाज के लिए 10 नवंबर 1979 का दिन महत्वपूर्ण और यादगार साबित हुआ। ये दिन सुवर्णाक्षरों में लिखा जायेगा, जिस दिन आदिवासी साहित्य मंच का निर्माण हुआ है। उसके बाद तो कई आदिवासी साहित्य सम्मेलन, संघटन आदि का गठन हुआ और होते रहे हैं। उन वन पुत्रों की वेदना की हुंकार इस सम्मेलन में जाग उठी।

हिन्दी कविता में आदिवासी चेतना:--

आदिवासी साहित्य वह साहित्य है जिसमें गिरिकंदराओं में रहनेवाले अन्याय को सहनेवाले जिसने सदियों तक कठोर समाज व्यवस्था के कारण आजीवन वनवास सहा उसकी मुक्ति का साहित्य।

आदिवासी लेखन की उभरती चेतना का सबसे सटीक और सही चित्रण वाहरु सोनवणे की 'स्टेज' कविता में स्पष्ट देखने को मिलता है----

" हम स्टेज पर गए ही नहीं
जो हमारे नाम पर बनाई गई थी
हमें बुलाया भी नहीं गया
ऊँगली के इशारे से हमारी जगह
हमें दिखा दी गई।
हम वहाँ बैठ गए।
हमें खूब शाबासी मिली
'और 'वे' स्टेज पर खड़े होकर
हमारा दुःख हमे ही बताते रहे
हमारा दुःख अपना ही रहा
जो कभी उनका हुआ नहीं
हम बडबडाएँ- अपनी शंकाएँ जताई।
'वे' कान देकर सुनते रहो और हुंकारे
हमारे कान पकड़कर हमे धमकाया
"माफी माँगो ...... नहीं तो......"

पूरे भारत में आज आदिवासी पहचान का आंदोलन जन्म ले चुका है। कई सालों से उनका शोषण कई स्तरों पर हो रहा था। उनकी जमीने, रोजगार साधन, उच्चवर्ग के लोगों ने हड़प लिया था। आदिवासी अपने ही घर में परदेसी ही गये हैं। महादेव टोप्पो 'त्रासदी' शीर्षक कविता में अपने उदगार व्यक्त करते है।

" इस देश में पैदा होने का मतलब क्या है?
जानते हो मेरे भाई? नहीं?
इस देश में पैदा होने का मतलब है
आदमियों का जातियों में बंट जाना
और गलती से तुम अगर हो गए पैदा जंगल में
तो तुम कहलाओगे आदिवासी वनवासी गिरिजन वगैरह वगैरह
आदमी तो कम से कम कहलाओगे नहीं ही।"

आदिवासी कवयित्री निर्मला पुतुल की कविताओं में आदिवासी होने एवं स्त्री होने की पीड़ाओं को वाणी दी गई है। अपनी स्त्री होने की वाणी देती हुई वह लिखती है—

"ये वे लोग है ये जो हमारे ही नाम पर लेकर
गटक जाते हैं हमारे हिस्से का समुद्र
ये वे लोग है जो हमारे बिस्तर पर करते हैं

हमारी बस्ती का बलात्कार
और हमारी ही जमीन पर खडे होकर पूछते हैं
हमसे हमारी औकात
ये वे लोग है जो मेरी कविताओं में भी तलाशते हैं मेरी देह।"

जागवाम ने 'पेटवा मशाली' कविता द्वारा वामन ने संवेदना और शिल्प को बखुबी रेखांकित किया है। वे कहते हैं —

"जिन्होंने किया है
आदि पुत्रों का शोषण
उनके लहू से लिखनेवाला हूँ मैं
रक्त रंजित इतिहास,,,,,,,।"

भारत में विकास के नाम पर आदिवासियों को अपनी भूमि और जंगलों से ही बेदखल नहीं किया अपितु नैतिक मानदण्डों को ताक पर रखकर उन्हें उनसे बेदखल कर दिया गया ।

हिन्दी नाटकों में आदिवासी चेतना :--

1980 के दशक से हिंदी नाट्य साहित्य में आदिवासियों की अनुगूंजे सुनाई देनी लगी थी। लेकिन आदिवासियों के जीवन-यथार्थ की प्रारंभिक नाट्य रूप में उपस्थिति हबीब तनवीर के नाटक 'हिरमा की अमर कहानी (1985) से मानी जानी चाहिए। इस नाटक की मूल विषय वस्तु है--"यह कहानी आदिवासी रियासत तितुरबसना की है। इस नाटक में आदिवासी जीवन का यथार्थ, उनके दुख, उनकी गरीबी, उनके अभाव, उनकी सरलता और भोलपन सब उपस्थित हुए हैं।

एक बार फिर (2000) डॉ. सुनील कुमार सुमन द्वारा लिया। इसमें उच्चवर्गीयों की यह कोशिश रही है। आदिवासियों की परंपरा और संस्कृति के नाम पर दलितों से एकदम-थलग कर दिया जाए। निम्न वाक्य इसी का साक्षी है ---- "चूरनमन!....... जी गुरुदेव इसके लिए हमने आदिवासियों को 'वनवासी' नाम दिया है ताकि ये खुद को दलितों से अलग समझे। इसका सबसे बड़ने लाभ यह होगा कि दलित अल्पसंख्यांक हो जाएंगे और उनकी मूवमेंट कमजोर हो जाएगी।"

इसके अलावा 'मोर्चा मानगढ़' (2009) घनश्याम सिंह भाटी 'प्यासा' द्वारा लिखा गया ऐतिहासिक नाटक है जिसमें जालीयाँवाला हत्याकांड के पूर्व मानगढ़ में 1500 के ऊपर आदिवासी महिलाएँ, बच्चे और पुरुष मारे गए थे। जो इतिहास में दर्ज नहीं किया गया उसपर प्रकाश डालता है ।

बिरसा मुंडा के जीवन पर केंद्रित नाटक 'धरती आबा' प्रकाशित हुआ 2007 में जिसके लेखक है ऋषिकेश सुलभ। बिरसा ने अंग्रेजी हुकमत और जागीरदारों के खिलाफ आंदोलन छेड़ा था। उसका चित्रण प्रस्तुत नाटक में रेखांकित है।

हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी चेतना :--

समकालीन हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी जीवन प्रमुखता से उभरकर सामने आ रहा है। पिछले कुछ दशकों में आदिवासियों पर केंद्रित उपन्यास लिखे गए है पर बहुत कम।इन उपन्यासों की संख्या धीरे धीरे बढ़ती गई। आदिवासी समाज जीवन भीतर से जितना खुला है। बाहरी लोगों को वह बंद समाज ही लगता है। उनके सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक, तथा सांस्कृतिक जीवन को अनुभव किए बिना उनका चित्रण करना कठिन है।

आदिवासी साहित्य- जीवन का साहित्य है। आदिवासी प्रकृति के सहयोगी तथा वे छल-कपट से दूर होते है। उंच-नीच का भेद उन्हे पता नहीं। संपत्ति जुटाने का लालच नहीं, अन्याय का विरोध और न्याय के पक्षधर होते है। इसलिए उनके साहित्य में इन्ही बातों का चित्रण होता है।

झारखण्ड के पीटर पॉल एक्का द्वारा रचित 'जंगल के गीत' में कथावस्तु आदिवासी प्रेम युगल के इर्द-गिर्द घूमती है। फिर भी आंचलिक, भौगोलिकता, प्रकृति, आदि प्रसंग अभिव्यक्त हुए हैं।

दूसरा उपन्यास हरिराम मीणा का 'धूणी तपे तीर' है जिसमें ब्रिटिश कालीन आदिवासी विद्रोह, संघर्ष व बलिदान की घटना का चित्रण है। सन 1913 में राजस्थान के बांसवाड़ा जिला के मानगढ़ पर्वत पर घटित हुई और जिसमें अंग्रेजी व रियसती फौजों से तंग आकर गोविंद गुरु के नेतृत्व में प्रमुख रूप से भील आदिवासियों ने यह लड़ाई लड़ी थी।

'लौटते हुए' 'वाल्टर भेंगरा 'तरुण' का उपन्यास है। इस कृति में झारखण्ड अंचल की ऐसी महिलाओं के दुख व शोषण को अभिव्यक्ति दी गयी है जिन्हें रोजगार की तलाश में दूरस्थ महानगरों एवं अन्य राज्यों की ओर पलायन करना पड़ता है। ऐसा पलायन तो पुरुष भी करते रहे हैं लेकिन स्त्रियों की पीड़ा विशेष स्वरूप रखती है। इसी बहुआयामी शोषण का चित्रण इस उपन्यास में हुआ है।

'सहराना' में पुन्नीसिंह ने सहरिया जनजाति के शोषण उत्पीड़न तथा उसके जीवंत संघर्ष को नई दृष्टि से परखा है।

'सहराना मूलतः आदिवासी जीवन के मुख्य अंग जंगल, जल, जमीन तथा औरतों की समस्याओं को उनके पारंपरिक, सामुदायिक, एवं सांस्कृतिक रूप में परखता है तथा उनके जीवन संघर्ष की जीवंतता को बरकरार रखते हुए विकास की ओर उन्मुखता को भी इंगित करता है। तेजिंदर ने काला पादरी के विन्यास में आदिवासी अंचलों में फैले अंधविश्वास, मान्यताएँ और कर्मकांड भूखमरी, अकाल लूट-खसोट प्रशासनिक असंवेदनशीलता सामंतवाद आदिवासी नेतृत्व के कठपुतलीपन तथा नई राजनीतिक करवट को बड़ी गंभीरता से चित्रित किया है।

संजीव द्वारा लिखित "जंगल जहाँ शुरू होता है" उपन्यास में सवर्ण, जमींदार, पुलिस, डाकू और नेता थारू आदिवासियों का जानवरों की तरह शोषण करते है। पुलिस और डाकुओं के झगडों में बेकसूर लोग मारे जाते है। आतंक, असुरक्षा और शोषण से बिहार के पश्चिमी चंपारण थारू जनजाति इससे बेहद त्रस्त है। थारू मर्दों को जमींदारों, डाकू, पुलिस, की वासना का शिकार बनती है। इस प्रकार लेखक ने शोषण का यथार्थ रूप प्रस्तुत किया है।

मैत्रैयी पुष्पा के 'अल्मा कबुतरी' उपन्यास में कबूतरा जाति का दर्दनाक जीवन प्रस्तुत हुआ है। राजेंद्र अवस्थी का उपन्यास 'जंगन के फूल' बस्तर के गोंड आदिवासी जीवन पर आधारित है। शरदसिंह का उपन्यास 'पिछले पन्ने की औरतें' की आदिवासी समाज की बेडनियाँ देह व्यापार करती है। वो नाचकर पैसा कमाती है, वेश्या वृत्ति इनकी विवशता है। संजीव के उपन्यास "धार" की मैना का चरित्र लडाकू आदिवासी औरत के रूप में रोमांचित करता है । संजीव का दूसरा उपन्यास 'जंगल जहाँ शुरू होता है' में राधा, सोना, रनिया, चाँदनी जैसे पात्रों द्वारा स्त्री के दैहिक शोषण की बात उठाई गई है।

हिन्दी कहानियों में आदिवासी चेतना :--

हिन्दी के जागरूक साहियूकारों ने कहानियों के माध्यम से आदिवासी जनजीवन को व्यापक मात्रा में चित्रित किया है। वासुदेव की कहानी शांबरी' की 'शांबरी' बिरसा से प्रेम करती है। मजबूरन उसे पिता ने तय किए हुए लड़के से शादी करनी पड़ती है । दुर्भाग्यवश पति साप के काटने से मरता है और शांबरी को डायन घोषित किया जाता है। और फिर शुरू होती है उसके जीवन की दर्दभरी यात्रा। आदिवासी समाज में स्त्री केवल देह ही है का संकेत करती है।

प्रत्यक्ष की "आईने में" कहानी का आदिवासी हैम्बरज मारा जाता है, उसके विचार खतरनाक थे। यह क्लासलेस सोसायटी की बात करता था। इस कहानी में आदिवासी लड़कियाँ बेखौफ होकर नक्सली आंदोलन से जुड़ती हुई दिखाई देती है। राकेश कुमार सिंह की पौन कहानी आदिवासी जीवन के विवाह के रीतिरिवाज एवं स्त्री के स्वाभिमान की ओर संकेत करती है।

संजीव की 'अपराध' कहानी की संघमित्रा आम आदमी के लिए दोषी व्यवस्था से लड़ते हैं, तो टेररीस्ट घोषित किए जाते है। उसे जेल में बंद किया जाता है। प्रायः आदिवासीयों को नक्सलवादी समझ लिया जाता है। रोज केरकेट्टा की कहानी भंवर नारी की दशा विशेष रूप से पुरुष वर्चस्व को अभिव्यक्त करते हुए उसे मुक्ति के पथपर अग्रेसर होने संकेत देती है। पीटर पॉल एक्का की रचना ' राजकुमारों के देश में एक ऐसी कहानी है जिसमें मंगल काका जैसे स्वाभिमानी नायक को केंद्र में रखा गया है। जो अच्छी मांदल भी बजाता है और देशी दवाओं से इलाज भी कराता है। कहानी के माध्यम से बाहरी दबावों के चलते आदिवासी जीवन में आए परिवर्तन को व्यक्त किया है।

भालचंद्र जोशी की कहानी “पहाड़ों पर रात” आदिवासियों के दुख और अभाव में कला सौंदर्य खोजनेवालों में अचानक आदिवासी संस्कृति के प्रति उमड़ रहे कला-प्रेम के खोखलेपन पर करारी चोट की गई है। आदिवासियों के के धर्मान्तरण की समस्या एक और चिंता का विषय है। चाहे ईसाई मिशनरियों द्वारा धर्मांतरण करने की बात हो चाहे भारतीयता के नाम हिंदू संगठनों द्वारा उन्हें धर्म के साथ जोड़ना हो, आदिवासियों को मूल धर्म तो पीछे हा छूट जाता है।

राकेश कुमार सिंह की कहानी 'आगिन देवी' भी यही स्थिति चित्रित हुई है। जंगल साहब और बद्री मिसिर के आपसी षड्यंत्र से जंगल काटने का ठेका वैसे तो किसी आदिवासी को मिलता है लेकिन असली मालिक बद्री मिसिर ही होता है। जंगल में बसे गाँव नंगे होते जा रहे थे और साफ जमीन पर बद्री मिसिर खेत बनते जा रहे थे। एक जंगल कट रहा था। लिकिन एक दूसरा जंगल उग रहा था और वह बेरोजगारी भुख विपन्नता और अंततः बंधुआ मजदूर बनने का जंगल। ऐसे में आदिवासी लड़कियों की इज्जत आबरू दातुन हो गई थी। जिसे तोड़ चबाकर फाडु युवकों के भीतर सुलगती आग को भड़का देती है।इस प्रकार अन्याय व शोषण की दाँसता यह कहानी चित्रित करती है।

मेहरुनिस्सा परवेज की 'जंगली हिरनी' कहानी आदिवासियों के बीच पल रही गलत धारणाओं को उजागर करती है। आदिवासी समाज शिक्षा को पाप समझता है। तथा इस कहानी की मेगन अंग्रेज़ पर्यटक के दैहिक शोषण का शिकार होती है। उनकी देहरी की खातिर कहानी की पापा शहरी मास्टर बाबू के शोषण का शिकार बनती है और अपनी सौतेली माँ के कहने देह व्यापार में लिप्त होती है।

संजीव की 'टीस', 'आप यहाँ है', 'भूमिका', 'घर चलो दुलारीबाई और दुनिया की सबसे हसीन औरत' आदि कहानियों में आदिवासी समाज का चित्रण मिलता है। संजीव की कहानियाँ वर्गीय चेतना और संघर्ष की कहानियाँ है। वे पारिवारिक न होकर सामाजिक है। वह जीवन की गहरी सामाजिक समस्याओं पर प्रकाश डालती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आदिवासी समाज के लगभग सभी विधाओं में इनका दुख-दर्द और इनकी वास्तविक स्थिति देखी जा सकती है।आज आदिवासियों का जीवन हिंदी साहित्य का प्रमुख अंग बन चुका है।